मंथन क्रमांक 72 विवाह पारंपरिक या स्वैच्छिक

कुछ स्वीकृत सिद्धान्त है

1 प्रत्येक महिला और पूरूष के बीच एक प्राकृतिक आकषर्ण होता है । यदि आकर्षण सहमति से हो तो उसे किसी परिस्थिति मे बाधित नही किया जा सकता, अनुशासित किया जा सकता है। इस अनुशासन का नाम विवाह है।

2 प्रत्येक व्यक्ति की स्वतंत्रता असीम होती है। उसकी सहमति के बिना उसकी कोई सीमा नही बनाई जा सकती। विवाह ऐसी सीमा बनाने का एक सहमत प्रयास है।

3 जब तक किसी व्यक्ति के प्राकृतिक अधिकारो पर आक्रमण न हो तब तक राज्य को उसमे कोई हस्तक्षेप नही करना चाहिये।

4 यदि किसी व्यक्ति की कोई स्वतंत्रता समाज पर दुष्प्रभाव डालती है तब समाज उसे अनुशासित कर सकता है, किन्तु बाधित नही।

5 रक्त संबंधो के शारीरिक संबंधो से संतानोत्पत्ति पूरी तरह वर्जित है। फिर भी इसे अनुशासित ही कर सकते है प्रतिबंधित नही ।

6 चार उददेश्य के संयुक्त लाभ के लिये विवाह व्यवस्था बनाई गई है 1 इच्छा पूर्ति 2 संतानोत्पत्ति 3 सहजीवन की ट्रेनिंग 4 वृद्ध माता पिता की कर्ज मुक्ति।

7 स्वतंत्रता, उच्चश्रृखलता तथा अपराध अलग अलग होते है । स्वतंत्रता असीम होती है, उच्चश्रृखलता को समाज अनुशासित कर सकता है, तथा अपराध रोकना राज्य का दायित्व है।

रक्त संबंधो के अंतर्गत संतानेत्पत्ति को सम्पूर्ण मानव समाज मे वर्जित किया गया है। मै नही कह सकता कि यह प्रतिबंध वैज्ञानिक है अथवा परम्परागत । किन्तु यह प्रतिबंध सारी दुनियां मे मान्यता प्राप्त है। प्राचीन समय मे शरीर विज्ञान जितना विकसित था उस आधार पर इस मान्यता को अस्वीकार करने का कोई आधार भी नही दिखता । इसलिये आवश्यक है कि भिन्न परिवारो के लडके और लडकियां के एक साथ रहने की सामाजिक व्यवस्था की जाये । भिन्न परिवारो के स्त्री पूरूषो को एक साथ जीने की व्यवस्था ही विवाह पद्धति है। विवाह के चार लक्ष्य निर्धारित है। शारीरिक इच्छा पूर्ति 2 संतानोत्पत्ति 3 सहजीवन की ट्रेनिग 4 माता पिता से ऋृण मुक्त होना। प्राचीन समय मे शारीरिक इच्छा पूर्ति की तुलना मे अन्य तीन को अधिक प्राथमिकता प्राप्त थी। किन्तु पिछले कुछ वर्षो से शारीरिक इच्छा पूर्ति को अन्य तीन की तुलना मे अधिक महत्व दिया जाने लगा है। इस बदलाव के कारण परिवार व्यवस्था भी टूट रही है तथा अनेक सामाजिक विकृतियां पैदा हो रही है। इस अव्यवस्था पूर्ण बदलाव मे साम्यवादी विचार की सबसे अधिक भूमिका पाई जाती है। जे एन यू संस्कृति उच्श्रृखलता को हमेशा प्रोत्साहित करती है। क्योकि वर्ग संघर्ष का विस्तार साम्यवाद का प्रमुख आधार है और जे एन यू संस्कृति उसकी प्रमुख संवाहक ।

पारंपरिक विवाह मे तीन का समिश्रण आवश्यक था 1 वर वधु की स्वीकृति 2 परिवार की सहमति 3 समाज की अनुमति । जब विवाह पद्धति मे कुछ विकृतियां आई और बाल विवाह को अधिक प्रोत्साहन दिया जाने लगा तब वर वधु की स्वीकृति की प्रथा बंद हो गई। यहां तक कि कई बार तो ब्राम्हण और ठाकुर ही मिलकर विवाह तय कर देते थे जिसे परिवार समाज तथा वर वधु को मानना पडता था। जब विवाह प्रणाली मे भ्रष्टाचार होने लगा तब परिवार के सदस्यो ने कमान संभाली और जब परिवार के सदस्य भी दहेज के लालच मे बेमेल विवाह कराने लगे तब यह कार्य वर वधु ने अपने हाथ मे ले लिया। किन्तु इस बदलाव के भी दुष्परिणाम देखने मे आये क्योकि अनेक मामलो मे वर वधुओ ने शारीरिक इच्छा पूर्ति को एक मात्र प्राथमिकता देनी शुरू कर दी । यह भी एक विकृति है जो बहुत जोर पकड रही है और इसके परिणाम स्वरूप समाज मे समस्याएं पैदा हो रही है। इस विकृति के कारण परिवार टूट रहे है बच्चो के संस्कार बिगड रहे है तथा वृद्ध माता पिता के साथ भी संबंध खराब हो रहे है।

यह स्पष्ट है कि वर्तमान विवाह प्रणाली बहुत दोषपूर्ण है क्योकि विवाह मे सिर्फ वर वधु ही एक साथ नही होते बल्कि दो परिवारो का मिलन होता है, तथा कुछ सामाजिक प्रभाव भी होता है । परिवार और समाज का अनुशासन पूरी तरह हट जाने से समाधान कम और समस्याए अधिक बढ रही है। फिर भी यह उचित नही होगा कि विवाह की पारंपरिक प्रणाली को ही आवश्यक कर दिया जाय। दोनो ही प्रणालियों मे अपने अपने गुण दोष है, इसलिये एक तीसरी प्रणाली को विकसित किया जाना चाहिये जिसके अनुसार वर वधु को विवाह मे स्वीकृति आवश्यक हो किन्तु परिवार की सहमति और सामाजिक अनुमति को भी किसी न किसी स्वरूप मे शामिल किया जाय। इसका अर्थ हुआ कि यदि कोई व्यक्ति इस अनुशासन को तोडकर विवाह करता है तो ऐसे विवाह को परिवार अस्वीकृत कर सकता है और समाज भी बहिस्कृत कर सकता है। फिर भी परिवार और समाज को किसी भी रूप मे यह अधिकार नही होगा कि वह दोनो के संबंधो मे कोई बाधा उत्पन्न कर सके। हर प्रकार को प्रेम विवाह को स्वीकृति तो देनी ही होगी । भले ही आप उसे बहिस्कृत कर सकते है। वर वधु को पति पत्नी के रूप मे रहने की स्वतंत्रता है किन्तु यह बाध्यता नही हो सकती कि माता पिता बिना सहमति के सास ससुर मान लिये जाये। इस तरह समाज का और परिवार को यह कर्तब्य होगा कि वह प्रेम विवाह को निरूत्साहित करे, प्रोत्साहित नहीं जैसा कि वर्तमान मे हो रहा है। संपिड विवाह प्रत्येक व्यक्ति की मौलिक स्वतंत्रता है किन्तु समाज द्वारा निषिद्ध है। इसका अर्थ हुआ कि रक्त संबंधो के अंतर्गत किसी भी विवाह को

पूरी तरह अमान्य का देना चाहिये, किन्तु ऐसे संबंधो को भी आप बल पूर्वक नही रोक सकते। उन्हे आप प्राथमिकता के आधार पर बहिस्कृत ही कर सकते है। वर्तमान परम्परागत परिवार व्यवस्था संपिड संबंधो पर नियंत्रण का एक बहुत ही अच्छा तरीका है जहां भाई बहन के बीच यौन आकर्षण को भावनात्मक रूप से विकर्षण के रूप मे बदल दिया जाता है । अर्थात बचपन से ही परंपरागत रूप से व्यक्ति के स्वभाव मे ऐसी भावना शामिल हो जाती है कि वह परिवार के सदस्यो के प्रति आमतौर पर आकर्षित नही होती। बल्कि आम तौर पर विकसित होती है।

विवाह प्रणाली कैसी हो और कैसे हो यह या तो वर वधु का विषय है अथवा परिवार का या विशेष स्थिति मे समाज का । इस मामले मे किसी भी रूप मे सरकारी कानून का कोई हस्तक्षेप नही होना चाहिये।

परम्परागत विवाहो की तीन मान्यताए है। 1 हिन्दूओ मे विवाह को जन्म जन्मांतर का संबंध माना गया है, तो इसाइयों मे स्त्री पूरूष के बीच आपसी समझौता और मुसलमानो मे पूरूष द्वारा महिलाओ का उपयोग। वर्तमान दुनियां मे भारतीय परम्पराये कमजोर पड रही है तथा इस्लामिक विवाह पद्धति को अमानवीय समझा जा रहा है। परस्पर समझौता की प्रणाली की ओर सारी दुनियां बढ रही है । मेरे विचार से यह व्यवस्था कोई गलत भी नही है। जिस प्रणाली के आधार पर परिवार व्यवस्था का सुचारू संचालन हो सके उस व्यवस्था को चलने देना चाहिये चाहे वह कोई भी व्यवस्था क्यो न हो। इसके बाद भी इस्लाम की व्यवस्था पूरी तरह गलत है क्योकि उस व्यवस्था मे स्वतंत्रता और समानता को पूरी तरह एक पक्षीय तरीके से बाधित किया गया है । पद्धति चाहे कोई भी हो, किसी भी प्रकार से चले किन्तु वह व्यक्ति परिवार और समाज तक ही सीमित हो सकती है। राज्य की उसमे किसी प्रकार की कोई भूमिका नही हो सकती । भारत की परंपरागत प्रणाली मे राज्य की किसी प्रकार की कोई भूमिका थी भी नही। यह तो अंग्रेजो के आने के वाद राज्य अपनी दादागीरी करने लगा। राज्य ने इस प्रणाली मे अनावश्यक छेडछाड की, प्रतिबंध लगाये और तोडफोड पैदा की। वाल विवाह, दहेज प्रथा, वेश्यावृत्ति नियंत्रण, बारबाला प्रतिबंध, बहु विवाह प्रतिबंध, महिला सशक्तिकरण, युवा वृद्ध सशक्तिकरण सहित ऐसे कानून बना दिये गये जिन्होने इस सामाजिक व्यवस्था को विकृत कर दिया। जब प्रत्येक व्यक्ति को मौलिक स्वतंत्रता है तब पति पत्नी को अलग अलग होने से राज्य कैसे रोक सकता है। कोई भी किन्ही दो व्यक्तियो को अलग अलग होने से किसी भी कानून के अंतर्गत नही रोक सकता किन्तु भारत मे तलाक के लिये भी सरकार की अनुमति लेनी पडती है । दो लोग आपसी सहमति से शारिरीक संबंध बनाते है तो इसमे सरकार का हस्तक्षेप क्यो? दो लोग विवाह करने के लिये आपस मे सहमति से पैसे का लेन देन करते है तो इसमे सरकर का दखल क्यो? निकम्मी सरकारे बलात्कार तो नही रोक सकती किन्तु वेश्या जैसे घृणित कार्य को रोकने के लिये पहरा करती है। हम किस उम्र मे विवाह करते है कितने विवाह करते है, कब संबंध विच्छेद करते है अथवा हम अपने परिवार मे महिला को सशक्त रखना चाहते है या पूरूष को ये सब परिवार के आंतरिक मामले है, कानून के नही । कानून अपने दायित्व पूरे नही कर पाता और महिला पूरूष के बीच सहमत और आंतरिक संबंधो मे हस्तक्षेप करता है । किसी भी प्रकार का कोई भी सरकारी हस्तक्षेप गलत है । आज कल की सरकारे तो प्रेम विवाह तक को प्रोत्साहित कर रही हैं जो पूरी तरह गलत है। प्रेम विवाह किसी भी स्थिति मे न तो प्रोत्साहित किया जा सकता है न ही उसे कानून से रोका जा सकता है। समाज इसे बल पूर्वक रोकना चाहता है और सरकार प्रोत्साहित करती है।

मेरे विचार से विवाह प्रणाली को परिवार और समाज के साथ अनुशासित होना चाहिये । प्रेम विवाह का प्रोत्साहिन बंद होना चाहिये। विवाह तलाक दहेज जैसे किसी भी मामले मे सरकार का हस्तक्षेप बंद होना चाहिये। सहमत सेक्स प्रत्येक व्यक्ति का मौलिक अधिकार है। इसे किसी भी परिस्थिति मे किसी कानून अथवा बल प्रयोग द्वारा नही रोका जा सकता ऐसी सामाजिक धारणा बननी चाहिये। साथ ही यह विचार भी आना चाहिये कि परिवार व्यवस्था सहजीवन की पहली पाठशाला है। उस पाठशाला मे प्रवेश करने के लिये विवाह व्यवस्था एक अच्छा समाधान है। यह बात भी आम लोगो को समझाई जानी चाहिये । परिवार व्यवस्था और समाज व्यवस्था के प्रति जो विरोध का वातावरण राजनेताओ तथा विशेष कर वाम पंथियो द्वारा समाज मे बनाया जा रहा है इसे भी पूरी तरह रोका जाना चाहिये और हर तरह का ऐसा प्रयत्न होना चाहिये जिसमे विवाह की पवित्रता बनी रहे।

आजकल न्यायालय भी इन मामलो मे बिना सोचे समझे निर्णय कर रहे है । लिव इन रिलेशन शिप व्यक्ति की स्वतंत्रता तो है किन्तु उसे सामाजिक मान्यता नही दी जा सकती। यदि न्यायालय लिव इन रिलेशन शिप को सामाजिक मान्यता दे देते हैं और विवाह प्रणाली पर कानूनी प्रावधान लागु करते है तो स्वाभाविक है कि विवाह प्रणाली निरूत्साहित होगी और लिव इन रिलेशनशिप प्रोत्साहित। स्वाभाविक है कि ऐसे प्रयत्नो से प्रेम विवाह प्रोत्साहित होगे और परिवार सहमति के विवाह निरूत्साहित। खाप पंचायत के आपराधिक आदेशो को रोका जा सकता है किन्तु गिने चुने आपराधिक हस्तक्षेप को माध्यम बनाकर खाप पंचायतो के सामाजिक प्रयत्नो को नही रोका जा सकता। आज कल देखने मे आ रहा है कि भारत के न्यायालय जब मन मे आता है तब कानून का सहारा ले लेते है और जब मन मे आता तब जनहित को परिभाषित करने लग जाते है। न्यायालयो को भी

इस मामलो मे और अधिक गंभीर होना चाहिये विवाह संबंध दो व्यक्तियो के संबंध है, दो परिवारो के संबंध है और समाज व्यवस्था को ठीक ढंग से विकसित करने का एक बडा माध्यम है। उससे खिलवाड करना ठीक नही।

मंथन कमांक 73

शिक्षित बेरोजगारी शब्द कितना यथार्थ? कितना षणयंत्र?

दुनियां मे दो प्रकार के लोग है । 1 श्रम प्रधान 2 बुद्धि प्रधान । बहुत प्राचीन समय मे बुद्धि प्रधान लोग श्रम जीवियों के साथ न्याय करते होंगे किन्तु जब तक का इतिहास पता है तब से स्पष्ट दिखता है कि बुद्धि प्रधान लोगो मे हमेशा ही श्रम का शोषण किया । वर्ण व्यवस्था को कर्म के आधार से हटाकर जन्म के आधार पर कर दिया गया और सारे सम्मान जनक कार्य अपने लिये आरक्षित कर लिये गये, चाहे योग्यता हो या न हो। विदेशो मे भी सस्ती कृत्रिम उर्जा का अविस्कार करके श्रम शोषण के अवसर खोज लिये गये । स्वतंत्रता के बाद भारत के बुद्धिजीवियों ने भी उसी का अनुसरण किया और कभी कृत्रिम उर्जा के मूल्य को नही बढने दिया। उसी तरह विदेशो की नकल करते हुए भारत मे एक शिक्षित बेरोजगारी शब्द प्रचलित कर दिया गया जिसके माध्यम से रोजगार के अवसरो मे भी बुद्धिजीवी अच्छे अवसर प्राप्त करने लग गये । इन लोगो ने शिक्षा को मौलिक अधिकार घोषित करने का भी पूरा प्रयत्न किया तथा गरीब ग्रामीण श्रमजीवियों के उत्पादन और उपभोग की वस्तुओ पर टैक्स लगाकर शिक्षा पर खर्च करना शुरू कर दिया। आज भी भारत का हर बुद्धिजीवी सस्ती कृत्रिम उर्जा शिक्षा पर बजट शिक्षित बेरोजगारी जैसे शब्दो का धडल्ले से प्रयोग करता है। आज भी भारत मे ऐसा कोई बुद्धिजीवी नही दिखता जो शिक्षा का बजट बढाने की बात न करता हो।

कोई भी शिक्षित व्यक्ति कभी बेरोजगार नही हो सकता। वह तो उचित रोजगार की प्रतीक्षा मे रहता है। श्रमजीवियों के पास रोजगार का एक ही माध्यम होता है शारीरिक श्रम जबकी शिक्षित व्यक्तियो के पास शारीरिक श्रम तो होता ही है साथ साथ शिक्षा उनके पास अतिरिक्त साधन के रूप मे होती है। मै आज तक नही समझा कि कोई भी व्यक्ति शिक्षित होने के बाद भी बेरोजागर कैसे हो सकता है। इन लोगो ने बेरोजगारी शब्द की भी एक नकली परिभाषा बना दी। एक भूखा व्यक्ति दो सौ रूपये मे काम करने को मजबूर है, किन्तु उसका नाम बेरोजगारो की सूची मे नही है। दूसरी ओर एक पढा लिखा व्यक्ति 200 रूपये मे काम करने को तैयार नही है। कुछ लोग तो हजार रूपये प्रतिदिन पर भी नौकरी न करके अच्छी नौकरी की खोज मे लगे रहते हैं किन्तु वे बेरोजगार की सूची मे है। विचार करिये कि ऐसे शोषक बुद्धिजीवियों को श्रमजीवी शिक्षा प्राप्त करने मे भी टैक्स दे ओर शिक्षा प्राप्त करने के बाद भी उनके रोजगार की व्यवस्था करे किन्तु इन तथाकथित शिक्षित बेरोजगारो को कभी शर्म नही आती। और वे हमेशा समाज से और सरकार से कुछ न कुछ मांग करते रहते है।

यदि हम बेरोजगारी का सर्वेक्षण करे तो खेतो मे काम करने के लिये आदमी नही मिलते और सरकारी नौकरी के लिये इतनी भीड उमडती है क्योकि दोनो के बीच मे सुविधा और सम्मान का बहुत ज्यादा फर्क है। यही कारण है कि आज शिक्षा प्राप्त करने के लिये एंव शिक्षा प्राप्त करने के बाद नौकरी के लिये भाग दौड दिखाई देती है।

दुनियां मे पहली बार वर्तमान सरकारो ने इस विषय पर कुछ करने की हिम्मत दिखाई है । विहार मे नीतिश कुमार और उत्तर प्रदेश मे योगी आदित्यनाथ ने परीक्षाओ मे नकल रोकने की पहल की। मै जानता हूॅ कि इस पहल के विरूद्ध इन दोनो पर कितना दबाव पडा किन्तु ये अव तक अडिग है । इसी तरह पहली बार केन्द्र सरकार ने छोटे छोटे स्वतंत्र रोजगार को भी रोजगार कहने का खतरा उठाया। देश भर के बुद्धिजीवियो ने पकौडा पोलिटिक्स कहकर इस अच्छे प्रयास का मजाक भी उडाया और विरोध भी किया । ऐसा सिद्ध किया गया जैसे शिक्षित बेरोजगारो का अपमान किया जा रहा है। सच्चाई यह है कि आज तक जिस तरह लधु उद्योग और श्रम का अपमान किया जाता रहा उस अपमान पर मरहम लगाने की आवश्यकता थी। टीवी पर बहस सुनकर ऐसा लगा जैसे पकौडा बेचना बहुत नीचे स्तर का कार्य है और पकौडा बेचने वालो से टैक्स लेकर शिक्षा प्राप्त करना तथा शिक्षा प्राप्त करने के बाद नौकरी के लिये भाग दौड करना बहुत अच्छा कार्य है। मेहनत करने वाला नीचे स्तर का आदमी है और कुर्सी पर बैठकर मेहनत करने वालो का रस चूसने वाला सम्मानित । शिक्षित बेरोजगारी के नाम पर ऐसे लोगो ने जिस तरह श्रम के साथ अन्याय किया वह बहुत ही कष्ट दायक रहा है। अब इस विषय पर कुछ सोचने की आवश्यकता है। मै तो धन्यवाद दूंगा मोदी जी को जिन्होने सारे खतरे और विरोध झेलकर भी पकौडा पोल्टिक्स का मूहतोड जबाब दिय। शिक्षित बेरोजगारी का हल्ला करने वालो का मुंह बंद हो गया।

आदर्श स्थिति यह होगी कि अब सम्पूर्ण नीति मे बदलाव किया जाये और श्रम शोषण के सभी बुद्धिजीवी षणयंत्रो से श्रम को बचाया जाय । देश के विकास की गणना श्रम मूल्य वृद्धि के आधार पर होनी चाहिये। शिक्षा का पूरा बजट रोककर श्रमिको के साथ न्याय पर खर्च होना चाहिये। गरीब ग्रामीण श्रमजीवी कृषि उत्पादन, वन उत्पादन, पर से सारे टैक्स हटाकर कृत्रिम उर्जा पर लगा देनी चाहिये। जो शिक्षा प्राप्त लोग श्रमजीवियो की तुलना मे अधिक लाभ के पद पर है उन्हे अधिक टैक्स देना ही चाहिये। इसी तरह बेरोजगार की परिभाषा भी बदल देनी चाहिये। किसी स्थापित व्यवस्था द्वारा घोषित न्यूनतम श्रम मूल्य पर योग्यतानुसार काम का अभाव बेरोजगारी की सही परिभाषा होती है। जो व्यक्ति न्यूनतम श्रममूल्य पर

योग्यतानुसार काम नही करना चाहता वह उचित रोजगार की प्रतिक्षा मे है बेरोजगार नही। उसे प्रतिस्पर्धा के माध्यम से रोजगार की पूरी स्वतंत्रता है किन्तु उसे समाज और सरकार की दया की पात्रता नही है। श्रम के साथ अन्याय करने मे सबसे अधिक भूमिका साम्यवादियो की रही है। वे कभी कृत्रिम उर्जा का मूल्य नही बढने देते । वे कभी शिक्षित बेरोजगारी की परिभाषा नही बदलने देगे। वे कभी नही चाहते कि श्रम का मूल्य बढे । वे तो श्रम का का मूल्य इस प्रकार बढवाना चाहते है जिससे समाज मे श्रम की मांग घटे और श्रम जीवियो के हाथ से रोजगार निकल कर मशीनो के पक्षमे चला जाये। अब साम्यवाद से मुक्ति मिल रही है और साथ ही शिक्षित बेरोजगारी के बुद्धिजीवियो के षणयंत्र से भी मुक्ति मिलनी चाहिये।

मै मानता हूॅ कि शिक्षा श्रम के अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण है किन्तु दोनो के बीच इतना असंतुलन नही होना चाहिये। शिक्षा को ज्ञान का माध्यम मानना चाहिये रोजगार का नही। शिक्षा को श्रम शोषण का आधार नही बनाया जा सकता जैसा कि आज हो रहा है। जिस तरह नौकरी की चाहत वालो ने श्रमिक रोजगार का मजाक उडाया और उसे कुछ राजनैतिक समर्थन मिला वह चिंता का विषय है। नौकर मालिक की गरीबी का पकौडा बेचने वाला कहकर मजाक उडावे यह गलत संदेश है। इस बात पर सोचा जाना चाहिये। मेरे विचार मे निम्नलिखित निष्कर्षो पर मंथन होना चाहिये।

1 प्राचीन समय से ही दुनियां मे श्रम के साथ बुद्धिजीवियो का षणयंत्र चलता रहा है । भारत मे भी निरंतर यही होता रहा है और आज भी हो रहा है। इसे बदलना चाहिये।

2 कोई भी शिक्षित व्यक्ति कभी बेरोजगार नही हो सकता क्योकि बेरोजगारी का संबंध शारीरिक श्रम से है और शिक्षित व्यक्ति के पास शारीरिक श्रम के अतिरिक्त शिक्षा भी एक अतिरिक्त माध्यम होता है।

3 गरीब ग्रामीण श्रमजीवी कृषि उत्पादन उपभोग की वस्तुओ पर टैक्स लगाकर शिक्षा पर खर्च करना और फिर ऐसे शिक्षित लोगो को रोजगार देने का प्रयास श्रमजीवियों के साथ अन्याय है।

4 शिक्षित बेरोजगार शब्द श्रम शोषण का षणयंत्र है क्योकि इस षणयंत्र के अंतर्गत बुद्धिजीवियो ने बेरोजगारी की परिभाषा बदल दी है।

5 बेरोजगारी के अच्छी परिभाषा यह है कि किसी स्थापित व्यवस्था द्वारा घोषित न्यूनतम श्रम मूल्य पर योग्यता नुसार काम का अभाव

6 शिक्षा या तो ज्ञान के लिये हे या रोजगार के लिये । यदि नौकरी के लिये होने लगे तो वह निकृष्ट प्रयत्न है।

7 दुसरो के टुकडो पर पलने वाले शिक्षार्थी तथा नौकरी मांगने वाले भिखारी स्वतंत्र श्रमिक की अवहेलना करने यह विदेशी मानसिकता है, भारतीय नही। इसे निरूत्साहित करने की आवश्यकता है।

8 योगी आदित्यनाथ ने उत्तर प्रदेश मे कडाई से नकल रोकने तथा नरेन्द्र मोदी ने शिक्षित बेरोजगारी शब्द पर आक्रमण करके बहुत हिम्मत का काम किया है। इनका पूरा पूरा समर्थन करना चाहिये।

9 गरीब ग्रामीण श्रमजीवी कृषि उत्पादन वन उत्पादन आदि से सभी टैक्स हटाकर कृत्रिम उर्जा पर लगा देनी चाहिये। साथ ही शिक्षा का बजट पूरी तरह बंद करके उसे कृषि पर खर्च करना चाहिये।

आखिर क्यो बदल रही है अरब की सोच—

लेखक विष्णु गुप्त (पंजाब केशरी से)

अरब बदल रहा है, अरब की सोच बदल रही है? आखिर क्यों अरब बदल रहा है, क्यो अरब की सोच बदल रही है? एकात्मक इस्लामिक संस्कृति मे अन्य धार्मिक संस्कृतियों की स्थापना कराने देने के पीछे कौन सी कहानी है, क्या संस्कृतियों के प्रतीकों के सम्मान से अरब की इस्लामिक कटटरता सही मे दूर हो जायगी? अगर अरब मे सही मे इस्लामिक कटटरता दूर हुई और परस्पर संस्कृतियों के बीच सामंजस्य और सहचर की भूमिका शुरू हुई तो फिर दुनिया की तस्वीर ही बदल जायेगी । दुनियां के अंदर जो काफिर मानसिकता काम कर रही है, जेहाद और अतंकवाद की मानसिकता है, वे सभी मानसिकताए अनिवार्य रूप से या तो कमजोर पडेगी या फिर दम तोड देंगी।

अरब के शासक अब इस सोच पर अडिग हो गये है कि इस्लाम की एकांकी सोच से न तो उनकी तरक्की हो सकती है और न ही हिंसाग्रस्त होने से बचा जा सकता है। वर्तमान स्थिति मे तो जेहाद की लडाई जारी रहेगी। अगर कोई एक ओसामा बिन लादेन मारा जायेगा तो फिर कोई अन्य ओसामा बिन लादेन बन जायेगा। इसलिये जरूरी है कि अरब की जनता को दूसरी संस्कृतियों की अच्छी चीजे, अच्छे विचार और मानवता की प्रेरक कहानियों से अवगत होना चाहिये। अब तक दुनियां मे अरब समाज को बंद समाज का दर्जा हासिल है अरब समाज इस लांक्षणा से भी त्रस्त रहा है कि वह हर परिवर्तन विज्ञान और सूचना क्रान्ति का अवरोधक रहा है । सच भी कुछ ऐसा ही है कि अरब समाज मुल्ला मौलवियों के डर से परिवर्तन के सहचर

नही बन पाता है जबकि दुनियां कटटरता को छोडकर विज्ञान और संस्कृतियो की सहिष्णुता से कितना आगे बढ चुकी है यह कहने की जरूरत नही।

अबू धावी मे प्रथम मंदिर की आधारशिला की बात थोडी देर बाद। सबसे पहले अरब मे भारत की बढती दखल, भारत की चमकती छवि, भारत की जरूरत, भारत की दक्ष कूटनीति , भारत की निवेश नीति आदि का गंभीरता से विचारण जरूरी है। अबू धावी के शासक या फिर अरब के मुस्लिम देशो के समूह भारत की चमकती छवि से चमत्कृत नही हुए होते। अरब को भारत की बढती कूटनीति की धमक नही मालूम होती तो फिर अरब के देश अपने यहा मंदिर निर्माण की अनुमति देते ही नही । वह भी आबू धावी मे जो अरब के देशो की सबसे चमकीली जगह है। उस क्षेत्र मे मंदिर निर्माण की अनुमति देना यह साबित करने के लिये काफी है कि अब अनिवार्य तौर पर भारत की उपस्थिति अरब मे दमदार है।

इसके पहले अरब देश पाकिस्तान की अफवाह और घृणा की राजनीति और कूटनीति के प्रभाव मे थे । अरब देशो को यह गलत फहमी थी कि पाकिस्तान के भरोसे उनकी सुरक्षा हो सकती है । पाकिस्तान बुरे समय मे उन्हे मदद करेगा। सबसे बडी बात यह थी कि कश्मीर पर पाकिस्तान ने जो अफवाह फैला रखी थी उसकी चपेट मे अरब के देश थे और अरब देश भारत को इस्लाम का दुश्मन मान बैठे थे। लेकिन अमरीका के वर्ल्ड ट्रेड सेन्टर पर हुए मुस्लिम हमले ने अरब देशो के विचार बदल डाले और यह एहसास करा दिया कि पाकिस्तान के भरोसे रहने और पाकिस्तान के साथ ही आतंकवादियो का संरक्षक बने रहना आत्मघाती साबित होगा। पाकिस्तान कश्मीर और इसराइल के नाम पर फिलस्तीन मे जो मुस्लिम आतंकवाद चला रहा था उस पर अरब देशो ने गंभीरतापूर्वक विचार किया और कश्मीर तथा फिलस्तीन के आतंकवाद से दूरियां बनाना ही श्रेष्ठ समझा।

इधर भारत ने कश्मीर पर पाकिस्तान की अफवाह का गंभीरता पूर्वक खंडन किया और अरब को यह बता दिया कि कश्मीर भारत का अंग है और रहेगा । भारत इस्लाम का दुश्मन नही बल्कि भारत एक धर्मनिरपेक्ष देश है जहा पर सभी संस्कृतियां एक दूसरे की सहचर होकर आगे बढती है और अपने लिये सम्मान अर्जित करती है।

अरब ने भारत की इधर 2 शक्तियो का एहसास किया है और इन दोना शक्तियों ने अरब के शासको को खासतौर पर प्रभावित किया है। भारत की पहली शक्ति प्रशिक्षित कामगार है। यह जानना जरूरी है कि अरब देशो मे 2 करोड से अधिक कामगार रहते है जो न केवल प्रशिक्षित है बल्कि उनके कंधो पर अरब जगत का निर्माण कार्य है। छोटे कामगार से लेकर इंजिनियर और डाक्टर तक अरब मे सेवाए दे रहे है। अगर भारत के कामगार न हो तो अरब देशो मे कोई भी निर्माण कार्य और विकास कार्य दक्षता के साथ सम्पन्न हो ही नही सकता है । सबसे बडी बात यह है कि अरब देशो मे 2 करोड जो भारतीय कामगार काम कर रहे है वे पूरी तरह से शान्ति प्रिय है । अरब की संस्कृति व राजनीति मे कोई खलल नही डालते है। भारतीय कामगार अपने काम से मतलब रखते है। अरव देशो के शासन तंत्र से भारतीय कामगार दूरी बना कर रखते है। जबकि पाकिस्तान बंगलादेश और अफ्रीका से आये कामगार अरब देशो के लिये खतरे की घंटी के समान है। पाकिस्तान बंगलादेश और अफ्रीका से आये कामगार अपने साथ इस्लाम की रूढीयों के प्रचार मे लग जाते है। सिर्फ इतना ही नही बल्कि पाकिस्तान बंगलादेश अफ्रीका देशो के मुस्लिम कामगार अरब की राजनीति और शासको के खिलाफ खडी होती जेहादी राजनीति का हिस्सा बन जाते है। यही कारण है कि अरब मे भारतीय कामगारो को सम्मान के साथ देखा जाता है और उन्हे तरजीह मिलती है। अरब देशो को प्रभावित करने वाली भारत की दूसरी शक्ति कुटनीति है। दुनियां यह जान चुकी है कि अमरीका को सिर्फ भारत ही प्रभावित कर सकता है। अभी भी अमरीका का अरब देशो पर प्रभाव है। चीन और रूस की बढती गतिविधियों के बावजूद भी अमरीका की शक्ति को अरब मे चुनौती देना मुस्किल है। भारत ने इधर अरब देशो मे निवेश की भी बडी इच्छा जताई है। इरान का एक बंदरगांह भी भारत बना रहा है। भारत की तेल कम्पनियां अरब मे निवेश करने के लिये तैयार बैठी है। अरब देशो को भी नया व्यापारिक सांझेदार चाहिये । दुनियां की कूटनीति मे अपनी बात मनवाने के लिये भारत जैसे प्रभावकारी और बढती हुई अर्थव्यवस्था वाले देश का साथ चाहिये। भारत ने फिलस्तीन के प्रश्न पर भी गौर किया है। नरेन्द्र मोदी फिलस्तीन जाने वाले और फिलस्तीन की समस्या के हल के लिये प्रभावकारी ढंग से काम करने की इच्छा जताने वाले पहले भारतीय प्रधान मंत्री है।

भारत ने पुरातन रूढियो के कारण अपना ही नुकसान किया है। सम्रुद पार करने से धर्म भ्रष्ट हो जायेगा यह पुरातन रूढि नही होती तो आज भारतीय संस्कृति इस्लाम और इसाइयत की संस्कृति से बडी संस्कृति होती। भारत की संस्कृति मे सभी संस्कृतियो को साथ लेकर चलने की क्षमता है। दुनिया की खतरनाक और तेजाबी संस्कृतियो के लगातार हमले के बावजूद भी भारतीय संस्कृति अपनी उदारता शान्ति तथा सदभाव को बना कर रखने मे सफल हुई है। अगर अरब देशों को भी विकास चाहिये उन्नति चाहिये तो उन्हे अन्य संस्कृतियों के साथ सहचर होना सीखना होगा। अबु धावी मे मंदिर निर्माण से एक तो भारत की बढती शक्ति और भारतीय संस्कृति की धमक स्थापित हुई है तो दूसरी ओर अरब मे रह रहे भारतीय संस्कृति के सहचरो को अपनी धार्मिक मीमांसा को शान्त करने के लिये अवसर मिलेगा । इसके लिये भारत के शासन के साथ ही साथ अरब के

मुस्लिम शासको की बदलती सोच की शक्ति प्रेरणा बनी है। अगर इस्लामिक संस्कृति इसी तरह अन्य धार्मिक संस्कृतियों के साथ सहचर बनेगी तो दुनियां से घृणा जेहाद और आतंकवाद जैसी बुराइयां विदा ले सकती है।

उत्तर–साम्यवाद के समापन के बाद संगठित इस्लाम दुनियां मे शान्ति के विरूद्ध सबसे बडा खतरा है। अब तक दुनियां ने संगठित इस्लाम को चौदह सौ वर्षो के बाद समझा कि वह प्रेम से नही समझ सकता। इन चौदह सौ वर्षो मे संगठित इस्लाम ने धार्मिक इस्लाम को भी लगभग समाप्त सा कर दिया। अब दुनियां ने अपनी रणनीति मे बदलाव किया है । किसी कटटर इस्लामिक देश मे नरेन्द्र मोदी के हाथों हिन्दू मंदिर की आधार शिला एक बदलते इस्लाम का शुभ संकेत है।

भारत मे पर्सनल ला बोर्ड के एक वरिष्ठ सदस्य द्वारा हिन्दुओ के साथ बैठकर बाबरी मस्जिद राम मंदिर प्रकरण पर चर्चा द्वारा समाधान की बात कहना भारत के लिये भी शुभ संकेत है। किसी मुसलमान सांसद द्वारा जय श्री राम कहने पर मुस्लिम संगठनो का भारी दबाव और सांसद की क्षमा याचना के विपरीत मुस्लिम धार्मिक विद्वान ने मुकाबला करने की हिम्मत दिखाई । साफ संकेत है कि भारत के भी धार्मिक मुसलमान संगठित इस्लाम के समक्ष शहीद होने तक तैयार है, किन्तु झुकने को तैयार नही। मै मानता हूॅ कि ऐसे हिम्मती मुसलमानो की संख्या नगण्य है, किन्तु संख्या का बढते जाना स्पष्ट संकेत है कि संगठित इस्लाम के सामने खतरा लगातार बढ रहा है । राहुल गांधी द्वारा अपनी अल्प संख्यक नीति मे बदलाव करके मंदिर भक्ति की राजनैतिक पहल संगठित इस्लाम का और मनोबल तोड रही है। नीतिश उन्हे पहले ही छोड चुके थे, साम्यवाद अब बुझता हुआ दीपक बन गया है, लालू जी जेल मे है और राहुल गांधी प्रवीण तोगडिया से सम्पर्क कर रहे है ऐसी स्थिति ने संगठित इस्लाम को धार्मिक इस्लाम की दिशा मे बढने के लिये मजबूर करने का प्रयत्न निरंतर जारी रहना चाहिये । भारत की इसमे सबसे अधिक भूमिका होगी । यदि भारत किसी तरह भारत मे मुस्लिम संगठनो का घमंड चूर चूर करने मे सफल रहा तो यह दुनियां के लिये एक अच्छी पहल होगी। तीन मोर्चे पर भारत मे दोनो शक्तियों के बीच टकराव जारी है। 1 कश्मीर 2 राम मंदिर 3 समान नागरिक संहिता । कश्मीर समस्या पर भारत सरकार अर्थात नरेन्द्र मोदी सरकार की नीतियों पर आंख मूंद कर विश्वास करने की जरूरत है। कश्मीर का मामला जटिल है। उसमे पाकिस्तान चीन तथा अन्य मुस्लिम राष्टो को मिलाकर फूक फूंक कर कदम रखना आवश्यक है। राम मंदिर के मामले मे मजबूत रहना उचित है। संगठित इस्लाम की इस मामले मे कमर टूट जानी चाहिये। संगठित मुस्लिम नेता बार बार संविधान की दुहाई दे रहे है। इस मामले मे यदि न्यायपालिका का निर्णय अपर्याप्त हो तो संविधान संशोधन द्वारा भी मामले को झुकाया जा सकता है। किसी भी स्थिति मे संगठित इस्लाम का मनोबल टूटना चाहिये। समान नागरिक संहिता भारत का मुसलमान खुद मागने लगेगा। जैसे जैसे संगठित हिन्दुत्व मजबूत होगा वैसे वैसे समान नागरिक संहिता की मांग बढेगी।

एक खतरा और है । कहीं संगठित इस्लाम को सबक सिखाते सिखाते संगठित हिन्दुत्व ही भस्मासुर न हो जाये । सिखो के मामले मे भी अनुभव खटटा रहा है और लिटटे के मामले मे भी। भिन्डरावाले या लिटटे दवा बनते बनते जहर बन गये। अभी अभी एक उदारवादी मंदिर समर्थक मुस्लिम धर्म गुरू के विरूद्ध एक हिन्दू मंदिर समर्थक ने निरर्थक आरोप लगाया है । टी वी बहस सुनकर स्पष्ट होता था की वे इस मामले मे रविशंकर जी को ब्लैकमेल करना चाहते थे तथा मंदिर मुददे को सुलझने नही देना चाहते । खतरा तो दोनो तरफ है किन्तु मेरी समझ मे वह खतरा भी टल रहा है। प्रवीण तोगडिया अथवा करणी सेना का संघ परिवार को आंख दिखाते हुए कांग्रेस से हाथ मिला लेना शुभ संकेत है। संगठित हिन्दुत्व का खतरा भी टल जायेगा। इसलिये जल्दबाजी करने की अपेक्षा धैर्य से स्थितियों की समीक्षा करनी चाहिये। मै तो पूरी तरह आश्वस्त हूॅ कि साम्य वाद की तरह ही दुनियां संगठित इस्लाम के उट को भी पहाड के नीचे ले आयेगी और भारत इस कार्य मे सफलता पूर्वक पहल कर सकेगा। मेरे विचार मे विष्णु गुप्त जी का लेख कटटर पंथी भारतीय मुसलमानो तथा कटटरपंथी हिन्दुओ को ध्यान से पढना चाहिये।

सामयिकी

प्राचीन समय मे भारत के कुछ क्षेत्रो का तेज गति से विकास हुआ होगा और कुछ विकास के आधार पर पिछड गये होंगे। अंग्रेजो ने ऐसे पिछडे क्षेत्रो को भारत के मूल निवासी के रूप मे चिन्हित करके एक टकराव की नींव रख दी। स्वतंत्रता के बाद हमारे शासको ने भी उसी अंग्रेजी धारणा की नकल की और उन्हे आदिवासी के नाम से अलग वर्ग मान लिया। इस वर्ग विभाजन का धूर्त राजनेताओ ने भरपूर लाभ उठाया। इन आदिवासियो में से ही बुद्धि प्रधान लोगो ने श्रम प्रधान आदिवासीयो का शोषण करने के उददेश्य से अन्य गैर आदिवासियों के साथ मिलकर कुछ ऐसे कानून बनाने शुरू किये जो बुद्धिजीवी आदिवासियों के लिये शोषण मे सहायक हों। ऐसा ही एक कानून बना कि कोई भी आदिवासी अपनी जमीन सिर्फ उसे ही बेच सकता है जो आदिवासी हो।

भारत मे कुल पच्चीस करोड परिवारो मे से लगभग ढाई करोड आदिवासी परिवार है। इन परिवारो मे से करीब तीन चार लाख परिवार ही प्रगति करके जमीन खरीद सकते है । अन्यथा अन्य तो बेचारे सत्तर वर्ष बाद भी उसी गरीबी मे श्रम जीवी के रूप मे रहने को मजबूर है। उनके पास काफी जमीन है किन्तु वे अपनी जमीन किसी गैर आदिवासी को बेच नही सकते और आदिवासी परिवारो के पास जमीन खरीदने की क्षमता भी नही और आवश्यकता भी नही।

छत्तीसगढ सरकार ने एक कानून बनाया कि यदि किसी आदिवासी की अपनी जमीन बेचने की इच्छा हो तो सरकार अपने सरकारी उपयोग के लिये उसकी सहमति से जमीन खरीद सकती है। इस कानून से छत्तीसगढ के तीस चालीस हजार सक्षम आदिवासी परिवारो मे चिंता व्याप्त हो गई । कांग्रेस पार्टी तो प्रारंभ से ही आदिवासियों को समाज की मुख्य धारा से जुडने के विरूद्ध रही है। उसने इस कानून का विरोध किया और इसे आदिवासी समुदाय के विरूद्ध बताया। भारतीय जनता पार्टी के आदिवासी नेताओ को इस कानून से दो तरफा नुकसान दिखा । एक ओर तो अब आदिवासियों की जमीन वे बहुत ही सस्ते दाम मे नही खरीद सकेंगे क्योकि सरकार एक विकल्प के रूप मे आ गई है तो दूसरी ओर कांग्रेस पार्टी वर्तमान चुनाव मे इस कानून के नाम पर आदिवासी मतदाताओ को बहका सकती है, जैसा उसने शुरू भी कर दिया। तीसरी ओर भारतीय जनता पार्टी अभी विपक्ष के मुसलमान आदिवासी हरिजन गठजोड का कोई खतरा नही उठा सकती । इसलिये छ0गढ सरकार ने यह कानून वापस लेकर बुद्धिमानी की और कानून नही बना ।

मै स्पष्ट देख रहा हॅू कि कोई व्यक्ति जिस सीढी से उपर चढता है, उस सीढी को इसलिये तत्काल गिराना चाहता है कि कोई अन्य उस सीढी से उपर न चढ जावे। जिस तरह हमारे आदिवासी नेताओ ने अपने मामूली स्वार्थ के लिये अपने करोडो आदिवासी भाइयो के साथ छल किया है वह बहुत घातक है। कोई आदिवासी आपसी सहमति से सरकार को भी अपनी जमीन नही बेच सकता, किन्तु आदिवासी पूंजीपति उस जमीन को खरीद सकता है। ऐसा कानून मेरे विचार मे न्याय संगत नही है। यदि इस कानून का अर्थ मेरे विचार से भिन्न हो तो मै ऐसी जानकारी के लिये आपकी आभारी रहूगा। किन्त ुयदि मेरी जानकारी सही है तो यह सोच निन्दनीय है कि सक्षम आदिवासी अक्षम आदिवासियों के विरूद्ध ऐसे कानूनो का दुरूपयोग करें। श्रमजीवीयों को बुद्धिजीवियों के संगठित षणयंत्र से बचाना चाहिये। बुद्धिजीवी आपस मे भले ही आदिवासी गैर आदिवासी का टकराव करते रहते हो किन्तु श्रमजीवियो का शोषण करने के मामले मे वे सब पक्ष विपक्ष भूल जाते है और एक होकर निर्णय कर लेते है। यह एक गंभीर मामला है और इस पर विचार होना चाहिये।

एक ही समाधान, ग्राम संसद अभियान

बहुत पूरानी कहावत है जिसके अनुसार समस्याओ के प्रणेता कर कानून नेता । इसके अनुसार वर्तमान समय मे दुनियां मे जितनी समस्याए है अथवा बढ रही है उन सबके मूल कारण मे दुनियां की राजनैतिक शक्तियों का बढता हस्तक्षेप ही है। ये शक्तियां कर और कानून के माध्यम से निरंतर समाज को गुलाम बनाती जा रही है। एक तरफ तो ये हर सामाजिक मामले का सरकारी करण करती जा रही है तो दूसरी ओर ये शक्तियां सारी समस्याओ के लिये समाज को ही दोषी भी सिद्ध करती रहती है। यह स्थिति सारी दुनियां की तो है ही किन्तु भारत की बहुत अधिक है। भारत मे भी उसी तरह सत्ता का केन्द्रियकरण हो रहा है। भारत मे भी राजनीति पूरी तरह अविश्वसनिया हो गई है और कर कानून नेता तीनो ही भारत मे समाज के लिये समाधान न होकर समस्या बन गये है। जब डाक्टर की नीयत खराब हो और डाक्टर बार बार मरीज पर ही बिमारी ठीक न होने के लिये दोषारोपण करता रहे तब जो विकट स्थिति उस मरीज की होती है वैसी ही आज भारत की हो रही है।

समस्या लाइलाज दिखती है किन्तु समाधान चाहे कितना भी कठिन क्यो न हो, करना तो होगा ही । पूरी समस्या का एक मात्र समाधान सम्पूर्ण व्यवस्था परिवर्तन ही है, जिसका अर्थ है भारत की राजनैतिक सामाजिक आर्थिक संवैधानिक तथा अन्य सब प्रकार की वर्तमान व्यवस्था मे मौलिक परिवर्तन।

मै जानता हॅू कि सम्पूर्ण व्यवस्था परिवर्तन एक साथ संभव नही हैं क्योकि समाज पूरी तरह कर कानून नेता के द्वारा गुलाम बना दिया गया है। इसलिये व्यवस्था परिवर्तन के लिये एक सूत्रिय कार्यक्रम ग्राम संसद अभियान के नाम से शुरू किया गया है। इस अभियान का अर्थ यह है कि भारत का संविधान समाज और तंत्र के बीच एक मजबूत कडी के रूप मे काम करता है। दुर्भाग्य से संविधान पर तंत्र का एकाधिकार हो गया है। तंत्र को समाज नियुक्त तो कर सकता है, किन्तु उसका नियंत्रण समाज का नही होता । क्योकि संविधान ने तंत्र को लोक पर नियंत्रण का पूरा अधिकार दे दिया है। दुसरी ओर संविधान पर ही तंत्र का नियंत्रण हो गया है।इसलिये इस अभियान की शुरूआत भारतीय संविधान को तंत्र के नियंत्रण से मुक्त कराने की पहल से शुरू हो रही है। वर्तमान मे तिजोरी की चाभी तंत्र के पास है और हम अपनी आवश्यकता की वस्तुए तंत्र से मांग कर ले सकते है। नई व्यवस्था के अंतर्गत तिजोरी की चाभी समाज के पास होगी और तंत्र समाज से मांग कर ही अपने अधिकारो का तब तक उपयोग कर सकता है जबतक समाज चाहे। इस अभियान के अंतर्गत एक बात और जोडी गई हैं कि संविधान के अंतर्गत ग्राम सभाओ को जितने अधिकार प्राप्त है वे अधिकार ग्राम सभाओ को तत्काल दे दिये जाये। संविधान मे किसी तरह का कोई संशोधन करना हो तो ग्राम सभाओ की अनुमति अवश्य हो ।

आवश्यकता है कि यह अभियान एक साथ पूरे देश के हर भाग से शुरू करना होगा। इसके लिये सभी प्रदेशो मे एक साथ योजना बनाकर कार्य शुरू कर दिया गया है। सम्पूर्ण अभियान की सफलता का अनुमान 2024 तक का है। किन्तु एक वर्ष मे ही सम्पूर्ण भारत को 100 लोक प्रदेशो मे बांटकर हर लोक प्रदेश मे एक एक बडा सम्मेलन करने की तैयारी चल रही है। देश

भर के प्रमुख लोग धीरे धीरे ग्राम संसद अभियान से जुड रहे है। मै भी मानता हूँ कि समस्याओ को टुकडे टुकडे मे समाधान खोजने की अपेक्षा ग्राम संसद अभियान के माध्यम से समाधान का प्रयत्न करना अधिक अच्छा मार्ग है। ग्राम संसद अभियान का वर्तमान कार्यालय दिल्ली मे है और धीरे धीरे 100 क्षेत्रो मे स्थानिय कार्यालय खुलने की योजना है। सब लोगो को चाहिये कि ग्राम संसद अभियान के साथ जुडकर इस नये प्रयत्न को मजबूत करे।

पुनर्निर्माण का अर्थशास्त्र

प्रस्तोता–आचार्य पंकज

स्वतंत्रता संग्राम आंदोलन के रंग बिरंगे इतिहास में जल्दी–जल्दी जो विचार बने हैं उन्हें कहीं भी व्यवस्थित ढंग से एक साथ नहीं प्रस्तुत किया गया। इस तरह का अध्ययन लाभदायक होगा। समाजवादियों, विशेषकर मार्क्सवादियों ने समाजवादी समाज के ब्योरे पर विचार करना अस्वीकार कर दिया था। उत्पादन वितरण और उपयोग सभी पूर्णता के अंग है। अंतर एकरूपता के भीतर ही रह सकता है। उत्पादन की और सब बातों से प्रमुखता रहती है । उसी से आगे का काम बढ़ता है और एक बार नई प्रक्रिया होती है। केवल नीच समाजवाद मुख्य रूप से वितरण के प्रश्नों के चारों ओर चक्कर काटता है। इस कथन के बावजूद अधिकांश समाजवादियों ने उत्पादन पर बहुत ही नाम मात्र का ध्यान दिया है और मुख्य रूप से वितरण के प्रश्नों के चारों ओर चक्कर काटते रहे हैं । यही अधिकांश समाजवादियों का गौरव और साथ ही साथ सीमा बन गया। इतिहास रूपी देव सभी देवों से अधिक निर्दयी है। वह अपने रथ को युद्ध में नहीं बल्कि शांतिपूर्ण आर्थिक विकास के समय में भी लाशों के ढेर पर दौडाता है। रथ के मार्ग को तथा आर्थिक विकास के नियमों को समाजवादियों ने कभी निर्धारित नहीं किया। विकास के मार्ग में समाजवाद रूपी जगन्नाथ के रथ के नीचे बलिदान होने वालों की लाशों का ढेर लग गया। अब हम लोगों को जो लोकतांत्रिक और मानवीय मूल्यों को महत्व देते हैं उन तरीकों की खोज करनी पड़ेगी जो ऐसी निर्दयता का शमन करें । लंगड़ाता हुआ समाजीकरण कितना कारगर होगा यह सोचने का विषय है। अत्यधिक तेज राष्ट्रीयकरण तो कम्युनिस्टों की विशेषता है। 1919 मे एक जर्मन समाजवादी प्रोफेसर न्यूरथ द्वारा दी गई चेतावनी आज भी अर्थ रखती है कि यदि अगले कुछ वर्षों में राष्ट्रीयकरण की दिशा में क्रमबद्ध कदम उठाने का इरादा किया गया और इस बीच में आंशिक अराजकता बनी रहने दी गई तो समाज पंगु हो जाएगा क्योंकि उद्योगों के जो मालिक समाजीकरण की नीत अपनाए जाने के बाद अभी मालिक के रूप में बच गए हैं वह इसलिए दूरगामी निर्णय ना कर पाएंगे और दूरदर्शी मनोवृति ना अपना सकेंगे कि पता नहीं कब उनका नंबर आ जाए। राष्ट्रीयकरण का बराबर खतरा अर्थव्यवस्था को पंगु बना दे सकता है। विवेकपूर्ण समाजीकरण लोकतांत्रिक समाजवाद की खास विशेषता है। पूर्ण या अत्यधिक तेजी का राष्ट्रीयकरण और लोकतंत्र साथ साथ नहीं चल सकते । सरकारों द्वारा अपनाया गया राष्ट्रीयकरण स्वतंत्रता को कठोरता से सीमित और कठिनाइयों को बढ़ाने वाला है। समाजीकरण उसी की चिंता करता है जो विद्यमान है, जो स्थापित है और काम कर रहा है। अर्ध उन्नत देशों के सामने जो वास्तविक कार्य है वह है नवनिर्माण, परंपरागत अर्थव्यवस्था का आधुनिक एवं सक्षम अर्थव्यवस्था में परिवर्तन। लोकतंत्र और मानववाद में आस्था रखने वाले समाजवादी मुंह में राम बगल में छुरी वाला आचरण नहीं करते उन्हें ज्ञान और व्यवहार का एक नियम लेकर मार्गदर्शन करना है। कुछ लोग यह तर्क प्रस्तुत कर सकते हैं कि कई एक समाजवादी भी कहते हैं कि एक बार उत्पादनशील शक्तियों का राष्ट्रीयकरण कर दिए जाने के बाद पूंजी संचय का सुगम और दूसरा गुणात्मक रूप हो जाता है। सारी गड़बड़ियां निजी स्वामित्व में निहित है जो उत्पादन सील शक्तियों और उनकी उपयोगिता के बीच हस्तक्षेप करता है इस हस्तक्षेप को समाप्त करने का अर्थ प्राचुर्य तथा समृद्धि के फाटक को खोल देना है, उस भ्रांति से मुक्त होना ही लोकतांत्रिक समाजवाद का आदि और अंत है। हमने बराबर विवेकपूर्ण समाजीकरण का पक्ष लिया है लेकिन जिस प्रकार पूर्ण राष्ट्रीयकरण करने वाले लोग हैं उसका कोई आर्थिक औचित्य नहीं है। उसका केवल इतना ही राजनीतिक लाभ है कि वह समाज पर राज्य का पूर्ण नियंत्रण स्थापित कर देता है। राष्ट्रीयकरण का अर्थव्यवस्था के केवल प्रधान अंगों पर ही प्रभाव नहीं पड़ता अपितु कृषि फार्म ,छोटे छोटे व्यवसाय कलपुर्जों के छोटे कारोबार और पेसे भी उसकी चपेट में आ जाते हैं चीन मे सभी आवास गृहों का राष्ट्रीयकरण कर दिया गया है। ऐसे अंधाधुंध और व्यापक राष्ट्रीयकरण का परिणाम आर्थिक सुधार नहीं होता अपितु वह जनता की परेशानियां बढ़ा देता है जैसा कि 1953 में पुराना मार्ग बदलकर नया मार्ग अपनाने के समय कहा था पूरे गांव और नगर क्षेत्रों में मोची, दर्जी, लोहार पाइप की मरम्मत और बिजली का काम करने वाले लोग नहीं थे। यदि कोई व्यक्ति अपनी टूटी हुई खिड़की को बदलवाना चाहता अथवा कृषि फार्म के किसी यंत्र का मरम्मत कराना चाहता तो उसे 20 से 30 किलोमीटर तक यात्रा करनी पड़ती थी पूर्ण नियोजन के अंतर्गत क्या ही यह पूर्ण अव्यवस्था थी? नवीनतम तथा प्रयोग केवल व्यवस्था के स्तर तक ही सीमित नहीं है शिल्प क्रिया के लिए भी उनका महत्व कम नहीं है। औद्योगिक खोजो और प्रयोगों का रूप और अवस्था दोनों परिवर्तनशील है यह ऐसा तथ्य है जिसकी लोगों ने उपेक्षा की है और जिसे समाजवादियों ने अच्छी तरह से समझा नहीं। हमें इस सत्य को समझना चाहिए। एशिया में उत्पादन संबंधों में ही नहीं अपितु उत्पादन की शक्तियों में भी परिवर्तन करना पड़ेगा।

समीक्षा—समाजवाद और समाजीकरण का अर्थ एक ही होता है। समाज वाद शब्द दुरूपयोग होने के कारण वास्तविक अर्थ खो चुका है। इसलिये समाजीकरण शब्द प्रचलित होना उचित हे। समाजीकरण राष्ट्रीय करण के ठीक विपरीत होता है। समाजीकण पूंजीवाद राष्ट्रवाद और तानाशाही का विकल्प है। समाजीकरण का अर्थ है समाज सर्वोच्च अर्थात आर्थिक राजनैतिक तथा सामाजिक व्यवस्था मे समाज की सर्वोच्च भूमिका । व्यवस्था की विभिन्न सीढिया परिवार, गांव, क्षेत्र प्रदेश, राष्ट्र होती है जो व्यक्ति से समाज को एक दूसरे से जोडती है। समाजीकरण मे नीचे की इकाइयां उपर की इकाइयों को दायित्व देती है तो राष्ट्रीयकरण मे उपर की इकाइयां नीचे की इकाइयों को शक्ति देती है। समाजीकरण मे उपर की इकाई नीचे वाली के समक्ष उत्तरदायी होती है तो राष्ट्रीयकरण मे नीचे वाली इकाई उपर वाली इकाई के समक्ष। आपने बहुत अच्छी तरह समाजवाद और समाजीकरण पर व्यापक चर्चा की शुरूआत करके अच्छा काम किया है।